ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 330-332
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

अद्वैतवेदान्त आचार्य शंकराचार्य का संक्षिप्त दार्शनिक विचार

डॉ0 राघवेन्द्र प्रताप मिश्र
प्रवक्ता– दर्शनशास्त्र विभाग, बुद्ध पी0जी0 कॉलेज, कुशीनगर (उ0प्र0), भारत

Received- 11.11.2018, Revised- 15.11.2018, Accepted - 19.11.2018 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांश : ***शंकर का अद्वैतवाद भारतीय अस्तिक दर्शन का सार माना जाता है। वेदान्त मत की विस्तृत व्याख्या के पहले उनके विषय में कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत करना आवश्यक प्रतीत होता है। शंकर का अद्वैतवाद, एक महान कल्पनात्मक साहस और तार्किक सूक्ष्मता का दर्शन है। शंकराचार्य ने मानवीय समाज को जो दर्शन प्रस्तुत किया तो वह ज्ञानपरक, बुद्धिपरक, तार्किक विद्यापरक न होकर आध्यात्मिक स्वातंश्य से युक्त हैं।***

कुंजीभूत शब्द– अद्वैतवाद, वेदान्त मत, कल्पनात्मक साहस, तार्किक सूक्ष्मता, मानवीय समाज, अध्यात्मिक।

शंकर का पावन चरित्र परमार्थ पथ के पथिकों के लिए महान संबल है। वह अद्वैत वेदान्त के प्रतिश्ठाता तथा सन्यासी सम्प्रदाय के गुरु माने जाते हैं। इनकी प्रतिभा अलौकिक थी और उनकी साधना अद्वितीय थी। अपनी विराट चेतना तथा वृद्ध ज्ञान के फलस्वरूप ही उन्होंने वैदिक सनातन हिन्दू धर्म को विघटित होने से बचा लिया। हिन्दू धर्म में अनेक आवश्यक एवं रचनात्मक सुधार किया।

वर्तमान समय में हम उथल–पुथल और संघर्शपूर्ण युग में अपने धर्म के संरक्षकों तथा प्रतिश्ठापकों को भूलते जा रहे हैं। शंकर ने अपने प्रभा मण्डल, व्यक्तित्व एवं विराट चेतना के स्तर पर भारतीय गौरव को समस्त संसार की दृश्टि में बहुत ऊँचा उठाया। वेद, उपनिशकों आरयण्क और स्मृतियों का सार गर्भित तथा शंकर के वेदान्त दर्शन में देखा जा सकता है। शंकराचार्य का जीवन चमत्कारों से परिपूर्ण था। भारतीय सनातन परम्परा में शंकराचार्य को भगवान शिव का ही रूप माना जाता है।

शंकराचार्य का दर्शन अनेक विशिश्टताओं से भरा हुआ है, उनके दर्शन के विशय में एक विचार यह भी है कि ''जहाँ एक ओर शंकर का दर्शनशास्त्र अनेकों को बल प्रदान करता है, तथा सांतवना देता है, दूसरी ओर निःसंदेह ऐसे भी व्यक्ति है, जिन्हें शंकर विरोध तथा अंधकार की एक अथाह खाई प्रतीत होते है। किन्तु हम सहमत हो या न हो, यह मानना ही पड़ेगा कि उनके मस्तिश्क का प्रकाश हमें कभी भी जहाँ का तहाँ ही नहीं छोड़ जाता।'' शंकर के दार्शनिक सिद्धान्त को 'अद्वैतवाद' कहते हैं। अद्वैत वेदान्त दर्शन का आधार उपनिशद 'ब्रह्मसूत्र' तथा गीता दर्शन को माना जाता है। उपनिशदों में जो एकात्मवादी विचार मिलते हैं, उसी का विकास 'अद्वैतवाद' में किया गया है। उपनिशदों में वर्णित तत्वों को वादरायण में 'ब्रह्मसूत्र' में सूत्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। शंकरचार्य का अद्वैतवाद' अद्वैत वेदान्त' के नाम से भी जाना जाता है। यह जानना आवश्यक है कि वेदान्त के सभी सम्प्रदाय चूँकि उपनिशद पर ही आधारित है। अतः शंकर का अद्वैत वेदान्त भी उपनिशद दर्शन है। शंकर ने तर्कों द्वारा यह सिद्ध किया है कि अद्वैत ही उपनिशदों का दर्शन है। वेदान्त का अर्थ है 'वेद का अन्त'। ऐसी मान्यता है कि 'उपनिशद' वेदों के अन्तिम भाग है। अतः इसे वेदान्त के नाम से कहा जाता है। वेदान्त दर्शन के आधार के रूप में उपनिशदों के अतिरिक्त 'ब्रह्मसूत्र' को भी माना जाता है। 'ब्रह्मसूत्र' को 'वेदान्त सूत्र' या शारीरिक सूत्र' के नाम से भी जाना जाता है। चूँकि शरीर स्थित अविनाशी आत्मा को केन्द्र बनाकर वेदान्त दर्शन का गठन किया गया है, इसलिए इसको 'शारीरिक सूत्र' या शारीरिक मीमांसा कहा गया है। वेदान्त दर्शन के आधार के रूप में 'श्रीमद् भगवत्गीता' भी है। इस प्रकार वेदान्त दर्शन के मुख्यतः तीन आधार हैं– उपनिशद, ब्रह्मसूत्र तथा भगवत्गीता इनको वेदान्त दर्शन की 'प्रस्थानत्रयी' कहा जाता है। ''शंकराचार्य के भाष्य और उनके द्वारा प्रतिपादित वेदान्त दर्शन की ऐसी मान्यता है कि जब हम कभी वेदान्त दर्शन की चर्चा करते हैं। तो इससे शंकराचार्य के वेदान्त का ही अर्थ लिया जाता है। अर्थात् शंकरमत वेदान्त दर्शन का समानार्थक सा बना गया है। यदि अन्य किसी व्याख्या का प्रसंग आता है तो हम साधारणतया उन आचार्यों का नाम जोड़ देते हैं, जो उस विशिश्ट भतांग के प्रवर्तक है, जैसे रामानुंज भत्त् अथवा बल्लभ मत्त आदि।''[2]

जीवन दर्शन और जगत के चरम और शाश्वत् सत्य का परमोत्कृष्ट अन्वेशण है। भारतीय दर्शन का प्रारम्भ मानवीय सभ्यता के आदिकाल में प्राचीन आर्यावर्त में हुआ। ऋग्वेद के संगीतमय उद्गादों का पर्यवसान उपनिशदों के चिन्तनमय विचारों में हुआ।

वेदान्त को वेद का अन्त समझा गया। यह वेदान्त भारतीय आध्यात्म विद्या का मुकुटमणि माना जाता है। भारतीय हिन्दू जनता का यही सर्वमान्य सिद्धान्त है। वेदान्त का अर्थ होता है– 'वेद का अन्त'। अन्त शब्द का अर्थ है 'रहस्य', 'सिद्धान्त'

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

अथवा 'समाप्ति।' वेदान्त शब्द का प्रयोग सबसे पहले उपनिशदों में ही पाया जाता है। मुण्डक, श्वेताश्वतर तथा महानारायण उपनिशद् में 'वेदान्त शब्द का प्रयोग मिलता है। इस प्रकार वेदान्त का मूल अभिप्राय उपनिशदों से ही है। परन्तु उपनिशदों के आधार पर विकसित सम्पूर्ण धार्मिक और दार्शनिक परम्परा वेदान्त के नाम से ही विख्यात् है। वेदान्त के विकास के तीन प्रस्थान माने जाते हैं– 1. उपनिशद् (श्रुतिप्रधान), 2. भगवद्गीता (स्मृति प्रधान) तथा 3. वेदान्त सूत्र (तर्क प्रधान)। उपरोक्त तीनों पर शंकर के पूर्ववर्ती और परवर्ती विद्वानों ने भाश्य रचनाएं की है।

शंकर ने अद्वैतवादके मूल सिद्धान्त इस सुप्रसिद्ध श्लोक से परिलक्षित होते हैं–

"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः।

अर्थात् 1. ब्रह्म ही सत्य है, 2. जगत मिथ्या है, 3. जीव ब्रह्म ही है और 4. जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। इन्हीं चार सिद्धान्तों की दृढ़ भित्ति पर अद्वैत वेदान्त के भव्य भवन का निर्माण हुआ है।

अद्वैत वेदान्त का मूलमंत्र है परमार्थ सत्ता रूप ब्रह्म की एकता तथा अनेक रूपात्मक जगत की मायिकता। शंकर अद्वैत वेदान्त के मतानुसार अखण्डैक रूप आत्मा अखिल अन्तर्वाह्य सत्ता के समवाय रूप के समानार्थक माना जाता है। इसका कारण यह है कि आत्मा ब्रह्म के अन्तर्गत एक अंश नहीं, बल्कि उसका मूलस्वरूप तथा अन्तर्तमय सत्य है। आत्म प्रत्यय स्वयंसिद्ध है। वास्तव में प्रत्येक सत्तावान् वस्तु आत्मा से अभिन्न–तादात्म्य भाव से ही वर्तमान है।

आत्मा से पृथक किसी वस्तु की सत्ता अकल्पनीय है, परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि जिस वस्तु की आत्मा से पृथक सत्ता की कल्पना की जायेगी, वह असत् हैं, बल्कि यह कि प्रत्येक वस्तु जिसकी सत्ता की कल्पना की जा सकती है वह आत्मा के साथ अपृथक्–तादात्म्य भाव से ही स्थित है और आत्मा से पृथक सत्ता रखने वाली प्रत्येक वस्तु 'असत् है, क्योंकि वह एक कल्पना मात्र है। शंकराचार्य का आत्मा सम्बन्धी विचार उपनिशद् के नित्यात्मवाद पर आधारित है। आत्मा सम्बन्धी विचार पर शंकर कहते हैं कि आत्मा ज्ञान रूप है, शंकर आत्मा को ब्रह्म कहते हैं। आत्मा और ब्रह्म अलग–अलग नाम है किन्तु सत्ता वही एक है। आत्मा की परमार्थिक सत्ता है। आत्मा और जीवन में अन्तर है। आत्मा पारमार्थिक है जबकि जीवन व्यावहारिक है। जीव के अन्दर रहने वाला पारमार्थिक सत्ता ही आत्मा है। आत्मा ही जीव का आधारभूत चैतन्य है। आत्मा सार्वभौम चैतन्य है।

"शंकर के अनुसार आत्मा के खण्डन करने वाले का ज्ञान ही आत्मा है।"[3] उनकी दृष्टि में आत्मा के अस्तित्व का खण्डन नहीं किया जा सकता, आत्मा का अस्तित्व स्वयं सिद्ध बताया जाता है, आत्मा अमर एवं अविनाशी है।

ब्रह्म के सम्बन्ध में शंकराचार्य का दर्शन उपनिशदों पर पूर्णतः आधारित है। उपनिशदों के एकतत्ववाद को ही शंकर ने अपने अद्वैतवादमें विवेचित एवं विकसित किया है। शंकर कहते हैं कि ब्रह्म ही एक मात्र तात्विक सत्ता है। दूसरे शब्दों में ब्रह्म मूलभूत तत्व है, इसी के ऊपर सभी वस्तुएं निर्भर है। ब्रह्म की व्याख्या करते हुए शंकराचार्य ने कहा है कि ब्रह्म अव्याख्येय है, ब्रह्म की कोई जाति नहीं है, ब्रह्म सजातीय, विजातीय तथा स्वगत् वेदों से रहित है ब्रह्म को नेति–नेति अर्थात् निशेधात्मक रूप में ही प्रस्तुत किया जाता है। अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म के स्वरूप के विषय में दो लक्षण–स्वरूप लक्षण तथा तटस्थ लक्षण बताये गये हैं। शंकर ने ब्रह्म को 'पर' और 'अपर' माना है।

संक्षेप में शंकर के दर्शन में ब्रह्म की विशेशताओं को निम्न रूपों में जाना जा सकता है, ब्रह्म न सत् है न असत् है ब्रह्म "निर्गुण गुणी" तैब्रेम पारलौकिक दृष्टि से निर्गुण है तो लौकिक दृश्टि से ब्रह्म सगुण है। शंकर ने आत्मा को ही ब्रह्म माना है दूसरे शब्दों में आत्मा और ब्रह्म का तादास्य सम्बन्ध ा है। वेदान्त मत में कहा भी गया है कि जीव में जो चैतन्य है, वही ब्रह्म रूप में इस सम्पूर्ण जगत में है। आत्मा ही परम तत्व है, ब्रह्म है। वेदान्त मत के अनुसार ब्रह्म के दो रूप है इन दोनों रूपों की चर्चा उपनिशदों में आती है जिन्हें क्रमशः पर ब्रह्म और अपर ब्रह्म कहते हैं पर ब्रह्म निर्विशेश, निगुर्ण तथा निरूपाधि है, इसके विपरीत अपर ब्रह्म सविशेश, अपर ब्रह्म लौकिक तथा सप्रांच है। निर्विशेष ब्रह्म जहाँ पारमार्थिक सत्ता है, वही सविशेश ब्रह्म व्यावहारिक सत्ता है।

जहाँ तक आत्म तत्व कि बात है वेदान्त मत में आत्मा सम्बन्धी विचार उपनिशद के नित्यात्मवाद पर आधारित है। आत्मा को शंकराचार्य ने मात्र एक तत्व माना है, आत्मा एक मात्र सत्ता है इसके अतिरिक्त जो कुछ भी है वह अवात्मा है। शंकर ने आत्मा को ब्रह्म कहा है आत्मा और ब्रह्म अलग–अलग नाम है किन्तु सत्ता वही एक है। अद्वैत मत में आत्मा को पारमार्थिक सत्ता माना गया है। आत्मा और जीव में भी अन्तर है, आत्मा पारमार्थिक है जबकि जीव व्यावहारिक है। जीव के अन्दर रहने वाला तत्व है, वह पारमार्थिक सत्ता है– वही आत्मा है। आत्मा को सार्वभौम चैतन्य कहा जाता है। आत्मा, अक्षय, एवं स्वयं प्रकाश है। आत्मा पाप–पुण्य से परे है। आत्मा का न तो जन्म होता है, न ही मृत्यु आत्मा परम आनन्द स्वरूप है। जीवन आनन्द रूप नहीं होता, आत्मा देश–काल से परे होता है। पवित्र आत्मा तो एक ही है किन्तु शंकर कहते हैं कि अविधा के कारण अनेक जीवों के रूप में दिखाई देता है। आत्मा के अस्तित्व का खण्ड नहीं किया जा सकता है। "आत्मा का अस्तित्व स्वयंसिव है।"[4]

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

वेदान्त दर्शन को भारतीय अस्तिक दर्शन का मेरूदण्ड कहा जा सकता है। जगत की उत्पत्ति के संदर्भ में न्याय और वैक्षेपिक मतों के अनुसार यह जगत, अचेतन परमाणुओं के संघात से निर्मित है। सारथ मत के अनुसार त्रिगुणात्मिका। (सत्व, रजस, तमस) गुणों से युक्त जड़ प्रकृति के द्वारा जगत रचना होती है। पाशुपत मत के दार्शनिकों ने यह माना है कि जगत की रचना ईश्वर और प्रकृति के साहचर्य से होती है, शंकराचार्य उपरोक्त मतों से सहमत नहीं है। उनके अनुसार इस जगत की उत्पत्ति किसी चेतन पदार्थ से हुई है। जिसमें प्रकृति उपादान कारण है और ईश्वर निमित्त कारण।

अद्वैतवादनितान्त प्राचीन सिद्धान्त है। इस मत का प्रतिपादन मात्र उपनिशदों में ही नहीं किया गया है। प्रस्तुत संहिता के अनेक सूक्तों में अद्वैत तत्व का आभाश स्पश्ट रूपेण उपलब्ध है। द्वैतवाद वैदिक ऋशियों की आधात्मिक जगत को नितान्त महत्वपूर्ण देन है। श्रुतियों के आधार पर आचार्य शंकर ने अपने अद्वैत वेदान्त को प्रतिष्ठित किया है। आचार्य शंकराचार्य ने जगत को मिथ्या समझते हुए भी उसकी व्यावहारिक सत्ता का प्रतिपादन किया। आचार्य की प्रतिभा ने वेदान्त को व्यावहारिक धर्म बना दिया। भविष्य में वेदान्त मत पर शोध की असीम सम्भावनाएं बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ0 राधाकृश्णन– भारतीय दर्शन, भाग तीन –पृ0 382–83.
2. डॉ0 एस0एन0दास गुप्त : भारतीय दर्शन, भाग–1, पृ0 400.
3. डॉ0 संगम लाल पाण्डेय–भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, पृ0 261.
4. डॉ0 संगम लाल पाण्डेय– भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण पृ0 261 पर उद्धृत स्वात्म निरूपणम्–4.

*****